अनिल क्षेत्रपाल**, जे.,** के सामने **.**

पी. डी. एम. धार्मिक और शैक्षिक संगठन - याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य- प्रतिवादी

सी. डब्ल्यू. पी. सं. 8705 का 2021

5 मई, 2021

हरियाणा निजी विश्वविद्यालय अधिनियम धारा**, 2006 S.10-**अधिनियम के तहत स्थापित विश्वविद्यालय न तो किसी कॉलेज या संस्थान को राज्य में या बाहर संबद्धता देने का हकदार है और न ही यह दूरस्थ शिक्षा द्वारा से डिग्री प्रदान कर सकता है।

यह माना जाता है कि एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 की खंड 10 (1) को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट है कि अधिनियम के तहत स्थापित विश्वविद्यालय को संबद्ध करने और तट से बाहर परिसर खोलने के लिए प्रतिबंधित किया गया है।खंड 10 की उप-खंड 2 में आगे स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया गया है कि विश्वविद्यालय हरियाणा राज्य के भीतर और बाहर कोई अपतटीय परिसर, अध्ययन केंद्र और परीक्षा केंद्र नहीं खोलेगा और दूरस्थ शिक्षा द्वारा से कोई कार्यक्रम प्रदान नहीं करेगा। इस प्रकार एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 के तहत स्थापित विश्वविद्यालय न तो राज्य में या बाहर किसी कॉलेज या संस्थान को संबद्धता देने का हकदार है और न ही यह दूरस्थ शिक्षा द्वारा से डिग्री प्रदान कर सकता है। इसलिए, याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तावित एकमात्र कारण कि न्यास/संघ/विश्वविद्यालय हरियाणा राज्य से बाहर अपनी गतिविधियों का विस्तार करना चाहता है, खंड 10 के तहत निषिद्ध है।

(पैरा 21)

चेतन मित्तल, वरिष्ठ अधिवक्ता

वी.के.सचदेवा के साथ, अधिवक्ता याचिकाकर्ताओं के लिए ।

बी.आर.महाजन, महाधिवक्ता हरियाणा के साथ समर्थ सागर, अतिरिक्त महाधिवक्ता।एजी, हरियाणा ।

अनिल क्षेत्रपाल, जे।

(1) न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वे अधिकारियों, न्यायाधीशाधिकरणों और अर्ध-न्यायाधीशिक न्यायाधीशाधिकरणों को निर्धारित प्रक्रिया का पालन करने के लिए आवश्यक प्रयास करते हुए ठोस न्याय करें। हालांकि, प्रक्रियात्मक कानून का पालन करने का आग्रह ठोस न्याय की कीमत पर नहीं हो सकता है। विशेष रूप से, संवैधानिक न्यायाधीशालयों से उम्मीद की जाती है कि वे प्रक्रियात्मक कानून का पालन करने के लिए ईमानदारी से प्रयास करते हुए वास्तविक अर्थों में न्याय करने की दिशा में झुकेंगे और प्रक्रियात्मक कानून का पालन करें। हालाँकि, प्रक्रियात्मक कानून को इस तरह से लागू नहीं किया जा सकता है जो मूल न्याय को पराजित/विलंबित करता है। अधिकांश समय, न्याय में देरी के परिणामस्वरूप न्याय से इनकार किया जाता है। इसलिए, न्यायालय और अर्ध-न्यायाधीशिक न्यायाधीशाधिकरणों सहित सभी प्राधिकरणों से अपेक्षा की जाती है कि वे शीघ्रता से मूल न्याय करने के लिए अपना ईमानदारी से प्रयास करें।

(2) पीठ की सुविचारित राय में, निम्नलिखित प्रश्न पर निर्णय की आवश्यकता है:-

(i) क्या हरियाणा निजी विश्वविद्यालय अधिनियम 2006 की खंड 10 इसके तहत स्थापित विश्वविद्यालय को हरियाणा राज्य की सीमाओं से परे अपनी गतिविधियों का विस्तार करने से रोकती है ?

(ii) यदि केवल एक ही दृष्टिकोण संभव है, तो क्या फिर भी न्यायालय के लिए प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में पारित आदेश को रद्द करना अनिवार्य है ?

(3) यह रिट याचिका निम्नलिखित तीन याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर की गई है:-

"(i) पी. डी. एम. धार्मिक और शैक्षिक संघ, जिसका पंजीकृत कार्यालय सेक्टर 3-ए, सराय औरंगाबाद, भादुरगढ़, जिला झज्जर, हरियाणा में अपने अधिकृत व्यक्ति-श्रीमती बिमला सिंह माध्यम से है, जिनकी आयु लगभग 55 वर्ष है।

(ii) पी.डी.मेमोरियल ट्रस्ट, जिसका अपना पंजीकरण कार्यालय डी-5/2, सेक्टर 15, रोहिणी, मानव चौक के पास, नई दिल्ली-110089 है और इसका एडमिन कार्यालय पी. डी. एम. परिसर, सेक्टर 3-ए, सराय औरंगाबाद, भादुरगढ़, जिला झज्जर, हरियाणा में याचिकाकर्ता नं.2 श्री जे.एस.लाठेर माध्यम से है।

(iii)पी. डी. एम. विश्वविद्यालय, सेक्टर 3-ए, सराय औरंगाबाद, भादुरगढ़, जिला झज्जर-124507, हरियाणा, अपने मुख्य कार्यकारी अधिकारी माध्यम से है।"

(4) इस रिट याचिका द्वारा से, याचिकाकर्ता निम्नलिखित ठोस राहतों के लिए प्रार्थना करते हैंः-

(i) प्रतिवादी सं. 2 द्वारा जारी दिनांक 17.03.2021 आक्षेपित संचार/आदेश (अनुलग्नक पी-1) को रद्द करने के लिए सर्टिओरारी की प्रकृति में एक रिट जारी करें। जिसके द्वारा याचिकाकर्ता सं.3- पीडीएम विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय को बदलने की अनुमति देने के लिए दिनांक 16.05.2019 (अनुलग्नक P-26) और दिनांक 09.10.2019 (अनुलग्नक P-29) की परिवर्तन की अनुमति याचिकाकर्ता संख्या 3-पीडीएम विश्वविद्यालय की प्रायोजक संस्था याचिकाकर्ता संख्या 1-पी.डी.मेमोरियल धार्मिक एवं शैक्षिक संघ याचिकाकर्ता संख्या 2-पी.डी.मेमोरियल संघ पूरी तरह से गैर-बोलने के माध्यम से आक्षेपित संचार/आदेश दिनांक 17.03.2021 (अनुलग्नक पी-1) वापस ले लिया गया है,बिना बताए जारी/पारित आक्षेपित वापसी पत्र जारी करने के कारण और वह भी सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किए बिना याचिकाकर्ताओं और विस्तृत पर विचार किए बिना रिकॉर्ड पर उत्तर/दस्तावेज, और प्रायोजक निकाय में परिवर्तन की मांग करने की अनुमति नजरअंदाज भी कर रहे हैं अखिल भारतीय स्तर पर ट्रस्ट के रूप में हरियाणा में पंजीकृत एक सोसायटी की गतिविधियों का विस्तार करने के लिए ही क्षेत्राधिकार मांगा गया था हरियाणा राज्य से बाहर विश्वविद्यालय परिचालन और व्याख्यात्मक मुद्दों में भ्रम से भी बचना चाहिए हरियाणा पंजीकरण की प्रयोज्यता के संबंध में और सोसायटी विनियमन अधिनियम, 2012 को निरस्त करने के मद्देनजर हरियाणा राज्य सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 हैं, इस प्रकार, पूरी कार्यवाही प्रतिवादी के हाथों में नंबर 2 असंवैधानिक है, स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण, मनमाना है, प्राकृतिक न्याय और निष्पक्षता के सिद्धांतों से रहित, ऑडी अल्टरम पार्टम का उल्लंघन, और भारत के संविधान के तहत संवैधानिक गारंटी का उल्लंघन है;

(ii) प्रतिवादी संख्या 1 और 2 को अनुमोदन पत्र को बहाल करने के लिए उचित निर्देश जारी करने के लिए परमादेश की प्रकृति में एक रिट जारी करना और 9.10.2019 जिसके द्वारा याचिकाकर्ता संख्या 3- पीडीएम विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय को याचिकाकर्ता संख्या 1-पी.डी मेमोरियल धार्मिक एवं शैक्षिक संघ से याचिकाकर्ता संख्या 2- पी.डी.मेमोरियल ट्रस्ट में बदलने की अनुमति को उसमें निर्धारित सभी शर्तों के साथ मंजूरी दी गई थी।

(iii) तत्काल याचिका विचाराधीनता रहने के दौरान याचिकाकर्ता संख्या 3 के प्रायोजक निकाय को बदलने की मांग करने के लिए याचिकाकर्ताओं या उनके

न्यासियों/सदस्यों/कर्मचारियों/एजेंटों के खिलाफ कोई भी अवैध कार्रवाई करने/जारी रखने से प्रतिवादीओं को रोकना और न्याय के हित में किसी भी न्यायाधीशालय के समक्ष या पुलिस अधिकारियों सहित किसी भी प्राधिकरण के समक्ष प्रतिवादीओं द्वारा दायर शिकायतों/निर्देशों/निर्देशों पर शुरू की गई या शुरू की जाने वाली या की जाने वाली सभी कार्यवाही/किसी भी चल रही दंडात्मक कार्रवाई या अन्य कार्रवाई पर रोक लगाना।"

(5) याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 17.03.2021 के संचार के संचालन पर रोक लगाने के साथ-साथ प्रतिवादी नं.1 तत्काल याचिका विचाराधीनता रहने के दौरान याचिकाकर्ताओं/उनके ट्रस्टी/सदस्यों/कर्मचारियों/एजेंटों के खिलाफ कोई भी अवैध कार्रवाई करने/जारी रखने से रोकने के लिए और न्याय के हित में किसी भी अदालत के समक्ष या पुलिस अधिकारियों सहित किसी भी प्राधिकरण के समक्ष प्रतिवादी द्वारा दायर शिकायतों/निर्देशों/निर्देशों पर शुरू की गई या शुरू की जाने वाली या की जाने वाली सभी कार्यवाही/किसी भी दंडात्मक कार्रवाई/कार्रवाई पर रोक लगाने के लिए।

तथ्यः-

(6) याचिकाकर्ता नं.1- सोसायटी/एसोसिएशन का गठन किया गया और सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत 23.03.1995 पर पंजीकृत किया गया। हरियाणा राज्य ने हरियाणा पंजीकरण और समितियों का विनियमन अधिनियम, 2012 (इसके बाद 'एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012' के रूप में संदर्भित) हरियाणा अधिनियम सं.1 2012 से। इसे हरियाणा सरकार में राजपत्र अतिरिक्त विधायी पूरक भाग 1 अधिसूचना दिनांक 28.03.2012 के माध्यम सेप्रकाशित किया गया था। एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 की खंड 92 के अनुसार, सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 को हरियाणा राज्य के क्षेत्र में लागू करने में निरस्त कर दिया गया था।नतीजतन, याचिकाकर्ता को पंजीकरण का एक नया प्रमाण पत्र जारी किया गया था।1-एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 के प्रावधानों के तहत 25.04.2013 पर सोसायटी। याचिकाकर्ता नं.2 एक संघ है जिसका गठन संघ विलेख तिथि 03.06.2016 द्वारा किया गया था। इसके बाद वर्ष 2016,2017 और 2020 में कुछ सुधार/पूरक कार्य किए गए हैं।

(7) जबकि याचिकाकर्ता नं.3 यह हरियाणा निजी विश्वविद्यालय अधिनियम, 2006 (इसके बाद 'एच. पी. यू. अधिनियम, 2006' के रूप में संदर्भित) के तहत स्थापित

एक विश्वविद्यालय है। याचिकाकर्ता नं.3 को दिनांक 14.01.2016 पर प्रकाशित एक अधिसूचना द्वारा से एचपीयू अधिनियम, 2006 की अनुसूची में संशोधन करके विश्वविद्यालय की स्थापना की अनुमति दी गई थी।

(8) दिनांक 15.03.2018 को, याचिकाकर्ता सं.1-सोसायटी ने पी. डी. एम. विश्वविद्यालय-याचिकाकर्ता संख्या 3 के प्रायोजक निकाय को बदलने का अनुरोध प्रस्तुत किया। वास्तव में 'नाम परिवर्तन' शब्द सही नहीं है। अनुरोध था याचिकाकर्ता नं.1 को याचिकाकर्ता नं. 2 प्रायोजक निकाय के रूप में प्रतिस्थापित करना। कुछ पत्राचार के बाद, याचिकाकर्ता के अनुरोध को स्वीकार कर लिया गया और दिनांक 16.05.2019 के संचार के माध्यम से, निदेशक, उच्च शिक्षा, हरियाणा ने याचिकाकर्ताओं को पी. डी. एम. विश्वविद्यालय, बहादुरगढ़ के प्रायोजक निकाय का नाम बदलने की अनुमति दी। दिनांक 16.05.2019 संचार का सक्रिय भाग निम्नानुसार हैः-

"यह सूचित किया जाता है कि राज्य सरकार ने पी. डी. एम. विश्वविद्यालय, बहादुरगढ़ के प्रायोजक निकाय का नाम पी. डी. मेमोरियल धार्मिक एवं शैक्षणिक संघ , बहादुरगढ़ से बदलकर पी. डी मेमोरियल ट्रस्ट, बहादुरगढ़ करने के अनुरोध को इस शर्त के साथ अनुमति दी गई कि पी. डी. एम. विश्वविद्यालय के संबंध में पी. डी. मेमोरियल ट्रस्ट, बहादुरगढ़, की सभी संपत्तियां और देनदारियां पी.डी.एम.आर.ई.ए., पी.डी.एम यूनिवर्सिटी के संबंध में भी करेगा पी.डी.मेमोरियल ट्रस्ट, बहादुरगढ़ में भी निहित होंगी और पंजीकरण प्राधिकरण के साथ सभी आवश्यक औपचारिकताओं को भी प्रायोजक निकाय द्वारा निर्धारित समय में पूरा किया जा सकता है।"

(9) दिनांक 09.10.2019 के संचार द्वारा,निदेशक, उच्च शिक्षा, हरियाणा ने एक बार फिर लिखा कि राज्य सरकार ने प्रायोजक निकाय का नाम बदलने के अनुरोध को अनुमति दे दी है। दिनांक 09.10.2019 संचार का सक्रिय भाग निम्नानुसार हैः-

"यह सूचित किया जाता है कि राज्य सरकार ने पी. डी. एम. विश्वविद्यालय, बहादुरगढ़ के प्रायोजक निकाय का नाम पी. डी. मेमोरियल धार्मिक एवं शैक्षिक संघ, बहादुरगढ़ से बदलकर पी. डी. मेमोरियल ट्रस्ट, बहादुरगढ़ करने के अनुरोध

को इस शर्त के साथ अनुमति दे दी है कि पी. डी. एम. विश्वविद्यालय के संबंध में पी.डी.एम.आर.ई.ए. की सभी संपत्तियां और देनदारियां पी. डी. मेमोरियल ट्रस्ट, बहादुरगढ़ में भी निहित होंगी और पंजीकरण प्राधिकरण के साथ सभी आवश्यक औपचारिकताओं को भी प्रायोजक निकाय द्वारा निर्धारित समय में पूरा किया जा सकता है।"

(10) याचिकाकर्ताओं का यह भी अनुरोध किया गया मामला है कि परिवार के सदस्यों के बीच विवाद था, जो याचिकाकर्ताओं के प्रबंधन के सदस्य भी थे, जिसे 22.01.2020 पर एक पारिवारिक समझौते द्वारा से हल किया गया था और सोसायटी के राज्य पंजीयक ने पहले ही विभाजन के संबंध में आवश्यक मंजूरी दे दी है। याचिकाकर्ता की सोसायटी नं1-एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 की खंड 51 (2) के तहत प्रभु दयाल स्मारक धार्मिक और शैक्षिक संस्थान (रिट याचिका से जाँच करें)। इसके बाद सोसायटी ने 08.03.2020 पर एक प्रस्ताव पारित किया। उपरोक्त बैठक में, विभिन्न अन्य निर्णयों के अलावा, यह भी निर्णय लिया गया कि याचिकाकर्ता की सभी संपत्तियां नं.1- सोसायटी याचिकाकर्ता नं.2 -पीडी मेमोरियल ट्रस्ट। संकल्प के सक्रिय भाग को निम्नानुसार निकाला गया हैः-

"6) यदि सोसायटी (पी. डी. एम. आर. ई. ए.) सक्षम प्राधिकरण द्वारा डी पंजीकृत है, तो पी. डी. एम. आर. ई. ए. की सभी संपत्तियां और देनदारियां पी. डी. मेमोरियल ट्रस्ट में निहित होंगी और यह सभी संबंधित बैंकों/वित्तीय पी. डी. एम. धार्मिक और शैक्षिक संगठन बनाम राज्य के प्रति पी. डी. एम. आर. ई. ए. की सभी देनदारियों के निर्वहन के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होगी। संस्थान/अन्य व्यक्ति आदि। ट्रस्ट सभी संबंधित प्राधिकरणों को समय पर आवश्यक अनुपालन भेजने के लिए भी जिम्मेदार होगा। इस संबंध में पारित किए जाने के लिए आवश्यक कोई और प्रस्ताव भी उचित समय पर पारित किया जा सकता है।"

(11) याचिकाकर्ता की शिकायत यह है कि 13.5.2019 पर दी गई अनुमति के बाद दिनांकित 09.10.2019 संचार को अब राज्य सरकार द्वारा अपने संचार दिनांक 17.03.2021 के माध्यम से वापस ले लिया गया है, जिसका क्रियात्मक भाग निम्नानुसार हैः-

"यह सूचित किया जाता है कि मामले की फिर से जांच और विचार करने के बाद राज्य सरकार ने पत्र संख्या डब्ल्यू. 20/13-2008 यू. एन. पी. (5) दिनांक 13.05.2019 और 09.10.2019 के माध्यम से दी गई अनुमति के प्रायोजक निकाय

का नाम बदलने के लिए को वापस लेने का फैसला किया है। " याचिकाकर्ताओं का आरोप है कि इस तरह की निकासी अवैध है।

न्यायालय में कार्यवाही:-

(12) दिनांक 22.04.2021 को, जब रिट याचिका प्रारंभिक सुनवाई के लिए आई, तो श्री समर्थ सागर, अति.एजी., हरियाणा, रिट याचिका की एक अग्रिम प्रति की आपूर्ति के अनुसार उपस्थित हुए और उनसे पूर्ण निर्देश प्राप्त करने और न्यायालय की सहायता करने का अनुरोध किया गया।इसके बाद रिट याचिका को 26.04.2021 तक के लिए स्थगित कर दिया गया,श्री समर्थ सागर, अति. एजी, हरियाणा,के अनुरोध पर मामला 27.04.2021 पर लिया गया था। मामले को दिनांक 29.04.2021 तक के लिए स्थगित कर दिया गया। दिनांक 29.04.2021 पर, श्री. बी.आर.महाजन, महाधिवक्ता हरियाणा, उपस्थित हुए हैं और पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की सहमति से, दलीलें सुनी गई हैं।प्रतिवादी-राज्य ने याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता को अग्रिम रूप से एक प्रति के साथ अपनी लिखित प्रस्तुतियों का एक संक्षिप्त नोट भेजा है। पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकीलों को सुनवाई के समय दलीलों के अलावा अपनी विस्तृत लिखित दलीलें भेजने की अनुमति दी गई है।

हरियाणा राज्य का रुख

(13) हरियाणा राज्य द्वारा दायर लिखित सारांश में यह बताया गया है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा जिस उद्देश्य के लिए अनुमति ली गई थी, वह एचपीयू अधिनियम, 2006 का उल्लंघन है।इसके अलावा, यह प्रस्तुत किया जाता है कि सोसायटी ने विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए बैंकों से बड़ी राशि उधार ली थी।न तो विश्वविद्यालय और न ही ट्रस्ट के पास कोई अचल संपत्ति है।जिस पूरी संपत्ति पर विश्वविद्यालय बना है, वह सोसायटी की है।सोसायटी और इसके सदस्य बैंकों को लगभग Rs.20 करोड़ के अपने बकाया का भुगतान करने में असमर्थ हैं।अपने बकाया का भुगतान आदेश के बैंक के प्रयासों को विफल आदेश के लिए, धन को मोड़ने के लिए प्रायोजक निकाय के प्रतिस्थापन का यह चतुर उपकरण सामने रखा गया है। यह भी बताया गया है कि मुख्यमंत्री के उड़न दस्ते में तैनात पुलिस उपाधीक्षक (जिसे इसके बाद डी.एस.पी. के रूप में संदर्भित किया गया है) ने आदेश पर सुश्री प्रोमिला सिंह द्वारा दायर शिकायत की जांच की है, जो सोसायटी, ट्रस्ट और विश्वविद्यालय की संस्थापक सदस्य थीं। जाँच के दौरान, यह पता चला कि सोसायटी ने यस बैंक लिमिटेड से ऋण लिया था और सितंबर, 2020 में सोसाइटी

से बकाया वसूली योग्य राशि लगभग Rs.17 करोड़ थी।बैंक के साथ समझौते के अनुसार, याचिकाकर्ता नं.1- सोसायटी ने यस बैंक लिमिटेड के साथ बनाए गए एस्क्रो खाते द्वारा से अपने पूरे नकदी प्रवाह को रूट करने पर सहमति व्यक्त की थी। एस्क्रो समझौते की शर्तों के अनुसार, सोसायटी ने अपने देनदारों को सोसायटी या उसके संस्थानों को देय सारी राशि सीधे एस्क्रो खाते में जमा करने के निर्देश जारी करने का बीड़ा उठाया।इसके बाद, बैंक के ध्यान में आया कि सोसायटी या उसके संस्थानों ने दिन-प्रतिदिन की गतिविधियों से उत्पन्न धन का उपयोग किया। यस बैंक लिमिटेड के अनुसार एस्क्रो खाते में जमा की जाने वाली राशि को डायवर्ट कर दिया गया था।विश्वविद्यालय और ट्रस्ट ने स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक लिमिटेड के साथ काम करना शुरू कर दिया।यस बैंक लिमिटेड द्वारा स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक से सोसायटी के खाते को बंद करने और यस बैंक को राशि की माफी के अनुरोध पर ये तथ्य सामने आए। जब स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक लिमिटेड ने इस संबंध में पी. डी. एम. विश्वविद्यालय से संपर्क किया, तो उन्हें विश्वविद्यालय के अधिकारी ने सूचित किया कि विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय को हरियाणा सरकार की मंजूरी से बदल दिया गया है और अब उनका पिछले प्रायोजक निकाय, यानी सोसायटी से कोई संबंध नहीं है।अदालत के संज्ञान में यह भी लाया गया कि विश्वविद्यालय ने स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक के खिलाफ दिल्ली उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की है। उप पुलिस अधीक्षक, की रिपोर्ट पर, अध्यक्ष और सोसायटी के अन्य अधिकारियों के खिलाफ भा.दं.सं. 112/16.04.2020 सी. की खंड 120-बी, 406,420,467,468,471 के तहत प्राथमिकी संख्या पहले ही दर्ज की जा चुकी है।

वैधानिक प्रावधानः-

(14) अब, इस पीठ के आगे बढ़ने से पहले, प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों पर ध्यान देना उचित है। प्रायोजक निकाय को एचपीयू अधिनियम, 2006 की खंड 4 (2) (बी) के अनुसार के तहत परिभाषित किया गया है।इसकी खंड 4 विश्वविद्यालय की स्थापना और उसके मूल्यांकन के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत करने की प्रक्रिया निर्धारित करती है। प्रायोजक निकाय को अपने वित्तीय संसाधनों का खुलासा करना है।खंड 9 में प्रावधान है कि किसी भी विश्वविद्यालय की स्थापना तब तक नहीं की जाएगी जब तक कि प्रायोजक निकाय के पास कम से कम 20 एकड़ भूमि का कब्जा न हो, यदि विश्वविद्यालय को नगरपालिका सीमा के बाहर या नगरपालिका सीमा के भीतर कम से कम 10 एकड़ भूमि की स्थापना की जानी है, जबकि नगर निगम की सीमा के भीतर भूमि की आवश्यकता 5 एकड़ है। खंड 10 में यह प्रावधान है कि राज्य के भीतर और बाहर अपतटीय परिसर आदि की संबद्धता और खोलने पर रोक होगी।

खंड 11 में प्रावधान है कि प्रायोजक निकाय विश्वविद्यालय के लिए न्यूनतम 5 करोड़ रुपये की राशि के साथ एक बंदोबस्ती निधि स्थापित करेगा, जिसे हरियाणा के उच्च शिक्षा आयुक्त के पक्ष में मूल रूप से निश्चित जमा रसीद के रूप में रखा जाएगा।

(15) इस स्तर पर, एच. पी. यू. अधिनियम 2006 की खंड 2 (वी), खंड 9,10 और 11 को निकालना उचित है:-

" किसी विश्वविद्यालय के संबंध में खंड 2 (v) "प्रायोजक निकाय" का अर्थ है -

(i) सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का केंद्रीय अधिनियम 21) के तहत पंजीकृत सोसायटी; या

(ii) कोई सार्वजनिक ट्रस्ट; या

(iii) कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का केंद्रीय अधिनियम 1) की खंड 25 के तहत पंजीकृत कंपनी;

भूमि की आवश्यकता।–कोई भी विश्वविद्यालय तब तक स्थापित नहीं किया जाएगा जब तक कि प्रायोजक निकाय के पास -

(i) नगरपालिका सीमा के बाहर कम से कम बीस एकड़ भूमि; या

(ii) नगरपालिका सीमा के भीतर कम से कम दस एकड़ भूमि;

(iii) नगर निगम सीमा के भीतर कम से कम पाँच एकड़ भूमि।]

[स्पष्टीकरण।- इस खंड के प्रयोजनों के लिए, "अधिकार" का अर्थ है स्वामित्व के रूप में या न्यूनतम तीस वर्षों की अवधि के लिए स्थायी पट्टा रखने वाले पट्टेदार के रूप में अधिकार।]

10. किसी भी कॉलेज या संस्थान को संबद्ध करने की कोई शक्ति नहीं है।- बार

संबद्धता और तट परिसर आदि को खोलना।-(1) विश्वविद्यालय में किसी भी कॉलेज या संस्थान को संबद्धता के विशेषाधिकार के लिए प्रवेश नहीं देगा।

(2) यह हरियाणा राज्य में या उसके बाहर कोई भी ऑफ कैंपस, ऑफ शोर कैंपस, अध्ययन केंद्र और परीक्षा केंद्र नहीं खोलेगा और दूरस्थ शिक्षा मोड द्वारा से कोई कार्यक्रम प्रदान नहीं करेगा।]

11. दान निधि।- [(1) प्रायोजक निकाय विश्वविद्यालय के लिए न्यूनतम पाँच करोड़ रुपये की राशि के साथ एक बंदोबस्ती निधि स्थापित करेगा जिसे हरियाणा उच्च

शिक्षा आयुक्त, पंचकूला के पक्ष में मूल रूप से निश्चित जमा रसीद के रूप में गिरवी रखा जाएगा।"

(16) इसके अलावा, हरियाणा राज्य के विधायी निकाय ने एच. आर. आर. एस. अधिनियम 2012 लागू किया, जिसे सरकार द्वारा 28.03.2012 पर अधिसूचित किया गया था। खंड 92 में प्रावधान है कि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860, हरियाणा राज्य के क्षेत्र को लागू करने में निरस्त कर दिया जाता है।खंड 92 की उप-खंड 3 में प्रावधान है कि सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत हरियाणा राज्य में किसी भी स्थान पर पंजीकृत किसी भी सोसायटी को एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 के तहत पंजीकृत माना जाएगा।खंड 76 में प्रावधान है कि सोसायटी एक निगमित निकाय होगी। खंड 76 और 92 को निम्नानुसार निकाला गया है:-

" खंड **76.**समाज एक निगमित निकाय होगा-एक समाज अधिनियम के तहत पंजीकृत एक निगमित निकाय होगा जिसके नाम के तहत यह पंजीकृत है और एक आम मुहर होगी।सोसायटी को संपत्ति का अधिग्रहण करने, धारण करने और निपटान करने, अनुबंध करने, मुकदमों और अन्य कानूनी कार्यवाहियों को स्थापित करने और उनका बचाव करने और अपने उन उद्देश्यों और उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक अन्य सभी कार्य करने का अधिकार होगा, जिनके लिए इसे स्थापित किया गया है।

92. निरसन और बचत।- (1) समितियों का पंजीकरण हरियाणा राज्य के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में लागू होने वाले अधिनियम, 1860 को इसके द्वारा निरस्त कर दिया जाता है।

(2) इस तरह के निरसन के बावजूद, निरस्त अधिनियम द्वारा या उसके तहत प्रदत्त किसी भी शक्ति का प्रयोग करते हुए उक्त अधिनियम (किसी भी आदेश, नियम, विनियमन, निर्देशों, प्रमाण पत्र या उपनियमों सहित) के तहत की गई कोई भी कार्रवाई या कोई भी कार्रवाई अधिनियम के संबंधित प्रावधानों द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए की गई या की गई मानी जाएगी।

(3) सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत हरियाणा राज्य में किसी भी स्थान पर पंजीकृत किसी भी सोसायटी को अधिनियम के तहत पंजीकृत माना जाएगा और इसका प्रमुख कार्यालय पंजीकृत कार्यालय माना जाएगा:बशर्ते कि

(i) ऐसी किसी सोसायटी का ज्ञापन और उपनियम, जिस हद तक ये अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के किसी भी प्रावधान के प्रतिकूल या असंगत हैं,

अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप अधिनियम के प्रारंभ से दो साल की अवधि के भीतर या ऐसी आगे की अवधि के भीतर लाया जाएगा जो सरकार अनुमति दे, और उसके बाद, ऐसी प्रतिकूलता या विसंगति की सीमा तक, शून्य और अप्रभावी माना जाएगा;

(ii) अधिनियम के प्रारंभ से तुरंत पहले निर्वाचित या नियुक्त और पद धारण करने वाला कोई भी अधिकारी अपने पद की अवधि समाप्त होने तक या जब तक ऐसा पद कानूनी रूप से समाप्त नहीं हो जाता, तब तक ऐसा पद धारण करता रहेगा।

(4) अधिनियम के तहत कुछ भी निरस्त अधिनियम के तहत किसी भी अधिकार, विशेषाधिकार, दायित्व, दायित्व या सजा को प्रभावित नहीं करेगाःबशर्ते कि अधिनियम के लागू होने से पहले शुरू की गई विघटन की कार्यवाही, या शासी निकाय का अधिक्रमण या प्रशासक की नियुक्ति सहित कोई भी जांच या कार्यवाही इस अधिनियम में निहित प्रावधानों के अनुसार जारी और संचालित की जाएगी।

विद्वान परामर्शों का तर्कः-

(17) इस पीठ ने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताों को विस्तार से सुना है और उनकी समर्थ सहायता से पेपर बुक का अध्ययन किया है। याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने अपनी प्रस्तुतियों के सार के साथ सारांश भी भेजा है जो इस प्रकार हैः-

1. "विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय के परिवर्तन के लिए अनुमोदन को वापस लेने का कोई कारण बताए बिना दिनांक 17.3.2021 का विवादित आदेश पूरी तरह से गैर-बोलने वाला आदेश है, जिसे राज्य में उच्चतम स्तरों पर उचित विचार के बाद दिया गया था।

2. याचिकाकर्ताओं को किसी भी जांच रिपोर्ट की कोई प्रति प्रदान नहीं की गई है।

3. विवादित आदेश के पारित होने से पहले कोई कारण बताएँ नोटिस जारी नहीं किया गया है।

4. विवादित आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ताओं को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया है।

5. याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों पर कोई विचार नहीं किया गया।

6. विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय को बदलने की औपचारिक अनुमति केवल इन कारणों से विश्वविद्यालय की गतिविधियों को अखिल भारतीय स्तर तक बढ़ाने की योजना बनाने के लिए मांगी गई थी किः

क) याचिकाकर्ता संख्या 1-सोसायटी, विश्वविद्यालय का मूल प्रायोजक निकाय, पहले सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत पंजीकृत था, जो एक केंद्रीय अधिनियम है जो अखिल भारतीय आधार पर संचालन की अनुमति देता है।इसने वर्ष 2008 में विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए आवेदन किया था जिसे 14.1.2016 पर स्थापित करने का आदेश दिया गया था।

ख) इस बीच, हरियाणा पंजीकरण और समितियों का विनियमन अधिनियम, 2012 और समितियों का पंजीकरण अधिनियम, 1860 के अधिनियमन के साथ निरस्त कर दिया गया और समितियों का पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत पंजीकृत पहले की समितियों का अधिकार क्षेत्र हरियाणा पंजीकरण और समितियों का विनियमन अधिनियम, 2012 की खंड 92 को देखते हुए केवल हरियाणा राज्य तक ही सीमित कर दिया गया था।

7. याचिकाकर्ताओं ने हरियाणा पंजीकरण और समितियों के विनियमन अधिनियम, 2012 के हरियाणा निजी विश्वविद्यालय अधिनियम, 2006 के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं किया है और न ही भारतीय दंड संहिता के तहत कोई अपराध किया है।

8. यह पूरी कार्रवाई पक्षपातपूर्ण है और एक सेवारत आई. ए. एस. अधिकारी-श्री विरेंद्र लाठेर, के प्रभाव में है। जो पारिवारिक समझौते और सोसायटी के विभाजन के बाद भी, अपनी पत्नी और रिश्तेदारों द्वारा से झूठी शिकायतें दर्ज कराने में लिप्त है।"

(18) इसके विपरीत, हरियाणा के विद्वान महाधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता नं.1- सोसायटी को केवल प्रायोजक निकाय का नाम बदलने की अनुमति थी। उन्होंने कहा कि उस समय राज्य के अधिकारी प्रायोजक निकाय का नाम बदलने के लिए याचिकाकर्ता के आवेदन के पीछे की बुरी साजिश को नहीं समझ पाए थे। जब शिकायत मिली तो तथ्य सामने आए। उन्होंने तर्क दिया कि सभी परिसंपत्तियां सोसायटी के स्वामित्व में हैं और न तो ट्रस्ट और न ही विश्वविद्यालय के पास कोई संपत्ति है।यह भी तर्क दिया जाता है कि विश्वविद्यालय यह दिखाने की कोशिश कर रहा है कि विश्वविद्यालय और न्यास न केवल हरियाणा राज्य के अधिकार क्षेत्र से बाहर बल्कि देश की सीमाओं से बाहर भी अपनी गतिविधियों का विस्तार करना चाहते हैं।अदालत का ध्यान आकर्षित करते हुए उन्होंने कहा कि 2006 के अधिनियम की खंड 10 को देखते हुए ऐसी अनुमति नहीं दी जा सकती है।वह आगे प्रस्तुत करता है कि डी.एस.पी. द्वारा जांच पर, यह आदेश चला कि याचिकाकर्ताओं ने धन को मोड़ने के लिए ये कदम उठाए हैं।उन्होंने आगे कहा कि न तो कोई दुर्भावनापूर्ण इरादा था और न ही श्री विरेन्द्र सिंह लाठेर, आई. ए. एस.द्वारा कोई अनुचित प्रभाव था।

चर्चाः-

(19) अब इस मामले को तय करने के दो तरीके हैं। एक आसान रास्ता है प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों के उल्लंघन में पारित आदेश को दरकिनार करना और उसका पालन करने के बाद एक नया आदेश पारित करने के लिए मामले को सक्षम प्राधिकारी को वापस भेजना। दूसरा है पहले मामले के गुण-दोष की जांच करना और यदि अदालत 'प्रथम दृष्टया' संतुष्ट है कि याचिकाकर्ता के पास कहने के लिए कुछ हो सकता है जिसका परिणाम अलग हो सकता है, तो मामले को सक्षम प्राधिकारी को वापस भेज दें। मामले के तथ्यों में, दूसरे मार्ग का पालन करना अधिक उचित होगा।

(20) इस पीठ की यह सुविचारित राय है कि वर्तमान मामले के तथ्यों में, विचाराधीन आदेश को केवल प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों के उल्लंघन के आधार पर दरकिनार करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इससे अंतिम परिणाम नहीं बदलने वाला है।इसके अलावा, याचिकाकर्ता यह दावा नहीं कर सकते कि विवादित आदेश पारित करने से पहले उन्हें कोई मौका नहीं दिया गया था।याचिकाकर्ताओं ने स्वयं कहा है और 30.12.2020, संलग्नक पी-40 पर डी.एस.पी. द्वारा दिया गया एक नोटिस संलग्न किया है। प्रतिवादी ने दिनांक 04.01.2021 संचार के माध्यम से कुछ दस्तावेजों के साथ जवाब दिया। इसके बाद, एक पूरक जवाब भी दिनांक 13.01.2021 (अनुलग्नक पी-2) द्वारा से भेजा गया था। डी.एस.पी ने दिनांक 22.01.2021 (अनुलग्नक पी-44) के संचार के माध्यम से आगे की जानकारी मांगी, हालांकि, याचिकाकर्ताओं ने मांगी गई जानकारी प्रदान नहीं करने का फैसला किया।इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं ने स्वयं मुख्यमंत्री को एक अभ्यावेदन दिया जिसमें उन्होंने 24.02.2021 दिनांकित पत्र के माध्यम से अपनी स्थिति स्पष्ट की (अनुलग्नक पी -46).अतः याचिकाकर्ता यह दावा नहीं कर सकते कि उन्हें विवादित आदेश पारित करने से पहले कोई अवसर नहीं दिया गया था।

(21) एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 की खंड 10 (1) को ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट है कि अधिनियम के तहत स्थापित विश्वविद्यालय तट से संबद्ध परिसर खोलने और संबद्ध करने से प्रतिबंधित किया गया है। खंड 10 की उप-खंड 2 में आगे स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया गया है कि विश्वविद्यालय हरियाणा राज्य के भीतर और बाहर कोई अपतटीय परिसर, अध्ययन केंद्र और परीक्षा केंद्र नहीं खोलेगा और दूरस्थ शिक्षा द्वारा से कोई कार्यक्रम प्रदान नहीं करेगा।इस प्रकार विश्वविद्यालय एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 के तहत स्थापित विश्वविद्यालय न तो राज्य में और बाहर किसी कॉलेज या संस्थान को संबद्धता देने का हकदार है और न ही यह दूरस्थ शिक्षा द्वारा से डिग्री प्रदान कर सकता है। इसलिए, याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तावित एकमात्र कारण कि ट्रस्ट/संघ/विश्वविद्यालय

हरियाणा राज्य से बाहर अपनी गतिविधियों का विस्तार करना चाहता है, खंड 10 के तहत निषिद्ध है।

(22) इसके अलावा, इस न्यायालय के समक्ष यह अनुमान लगाया गया है कि एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 के तहत पंजीकृत सोसायटी को राज्य से बाहर अपनी गतिविधियों को करने से प्रतिबंधित किया गया है। इस संबंध में अधिनियम की खंड 1 और 92 का संदर्भ दिया गया है। खंड 1 को ध्यानपूर्वक पढ़ने पर, यह स्पष्ट है कि इसमें केवल यह प्रावधान है कि एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 का विस्तार हरियाणा राज्य तक होगा। यह कहीं भी प्रावधान नहीं है कि अधिनियम के तहत पंजीकृत सोसायटी हरियाणा राज्य के बाहर कोई भी गतिविधि नहीं कर सकती है। इसी तरह, खंड 92 जो ऊपर निकाली गई है, याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता के तर्क का समर्थन नहीं करती है।

(23) इसके अलावा, यह निर्विवाद है कि पूरी संपत्ति सोसायटी के स्वामित्व में है। न तो विश्वविद्यालय और न ही ट्रस्ट किसी भी अचल संपत्ति का मालिक है। यह भी विवाद में नहीं है कि सोसायटी के साथ-साथ विश्वविद्यालय ने विभिन्न बैंकों से एक बड़ी राशि उधार ली है और एक संपार्श्विक प्रतिभूति के रूप में, सोसाइटी/संघ के नाम पर संपत्ति को गिरवी रखा गया है।यह भी विवाद में नहीं है कि जब स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक ने याचिकाकर्ता संख्या 2 और 3 को स्पष्टीकरण देने के लिए कहा, तो उन्होंने यह रुख अपनाया कि विश्वविद्यालय और ट्रस्ट का याचिकाकर्ता संख्या 1 से कोई संबंध नहीं है।1- संघ।

(24) इसके अलावा, एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 में प्रायोजक निकाय को बदलने का कोई प्रावधान नहीं है। अधिनियम की योजना के अनुसार, प्रायोजक निकाय को उस भूमि का मालिक होना आवश्यक है जिस पर एक विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव है। खंड 9 के अनुसार, किसी भी विश्वविद्यालय की स्थापना की अनुमति तब तक नहीं दी जा सकती जब तक कि प्रायोजक निकाय के पास उसमें निर्दिष्ट भूमि का कब्जा न हो।खंड 9 के स्पष्टीकरण को सावधानीपूर्वक पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि भूमि पर या तो स्वामित्व का अधिकार होना चाहिए या कम से कम 30 वर्षों की अवधि के लिए स्थायी पट्टे वाले पट्टेदार के रूप में होना चाहिए। यह विश्वविद्यालय की स्थापना की अनुमति देने के लिए अनिवार्य है। खंड 11 में आगे यह प्रावधान किया गया है कि प्रायोजक निकाय विश्वविद्यालय के लिए न्यूनतम 5 करोड़ की एक बंदोबस्ती निधि स्थापित करेगा। इस प्रकार, अधिनियम की पूरी योजना के लिए आवश्यक है कि प्रायोजक निकाय के पास पर्याप्त वित्तीय संसाधन होने चाहिए। एक बार जब विश्वविद्यालय को किसी भी संपत्ति के स्वामित्व या स्वामित्व की आवश्यकता नहीं होती है, तो एचपीयू अधिनियम, 2006 के संदर्भ में प्रायोजक निकाय बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। याचिकाकर्ता प्रायोजक निकाय को ट्रस्ट के साथ

प्रतिस्थापित करना चाहते हैं जिसके पास कोई संपत्ति नहीं है। हालाँकि, यह अनुमान लगाया गया है कि सोसायटी ने संपत्ति को ट्रस्ट में स्थानांतरित करने का प्रस्ताव पारित किया है, हालाँकि, प्रस्ताव चतुराई से लिखा गया है। संकल्प का प्रासंगिक हिस्सा पहले ही निकाला जा चुका है। प्रस्ताव में प्रावधान है कि यदि सोसायटी सक्षम प्राधिकारी द्वारा पंजीकृत है, तो सोसाइटी की सभी परिसंपत्तियां और देनदारियां ट्रस्ट में निहित होंगी।इस प्रकार, जब तक सोसायटी सक्षम प्राधिकारी द्वारा पंजीकृत नहीं हो जाती, तब तक संपत्ति सोसायटी में निहित रहती है, न कि ट्रस्ट के पास। यह याचिकाकर्ता नं.1 का मामला नहीं है कि उसने अपना पंजीकरण रद्द करने के लिए आवेदन किया है। इसके अलावा, सोसायटी एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 की खंड 76 के अनुसार एक निगमित निकाय है और इसलिए, यह संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 के प्रावधानों के अनुसार एक कानूनी इकाई है । संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार,1882,Rs.100 या उससे अधिक मूल्य की संपत्ति का हस्तांतरण केवल आवश्यक स्टाम्प शुल्क के भुगतान पर एक पंजीकृत दस्तावेज द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित किया जा सकता है। यहां यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह याचिकाकर्ताओं का मामला नहीं है कि किसी भी पंजीकृत दस्तावेज को निष्पादित किया गया है।याचिकाकर्ताओं की निर्भरता केवल यह तर्क देने के प्रस्ताव पर है कि संपत्ति हस्तांतरित की गई है। दलीलों के दौरान, याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता से यह समझाने का अनुरोध किया गया कि संपत्ति कैसे हस्तांतरित की जाती है। हालाँकि, उन्होंने जवाब दिया कि प्रस्ताव को देखते हुए, संपत्ति को ट्रस्ट में स्थानांतरित करने का निर्णय पहले ही ले लिया गया है। जैसा कि ऊपर देखा गया है, संकल्प सशर्त है।इसके अलावा, अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार एक प्रस्ताव द्वारा अचल संपत्ति का कोई हस्तांतरण नहीं किया जा सकता है।यहां यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह याचिकाकर्ताओं का मामला नहीं है कि सोसायटी का स्वयं ट्रस्ट में विलय हो गया है।

(25) इस मामले का एक और पहलू भी है।दी गई अनुमति को सावधानीपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट है कि विश्वविद्यालय के प्रायोजक निकाय का नाम बदलने की अनुमति दी गई है। प्रायोजक निकाय को प्रतिस्थापित करने की कोई अनुमति नहीं दी गई है।इस प्रकार, निर्णय लेने वाले प्राधिकरण ने कभी भी उक्त प्रायोजक निकाय को प्रतिस्थापित करने की अनुमति नहीं दी। याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वकील स्वीकार करते हैं कि अधिनियम में इस आशय का कोई प्रावधान नहीं है।

(26) उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, कोई अन्य संभावित निर्णय नहीं है।अतः प्रायोजक निकाय को प्रतिस्थापित करने के लिए संघ या विश्वविद्यालय को कोई अनुमति

नहीं दी जा सकती है। इन परिस्थितियों में, भले ही प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों का उल्लंघन हो, फिर भी इस पीठ को पारित आदेश को दरकिनार करना और फिर से निर्णय लेने का निर्देश देना उचित नहीं लगता है, जो व्यर्थ में एक अभ्यास होगा। किसी भी मामले में, इस पीठ ने इस संबंध में याचिकाकर्ताओं को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिया है, लेकिन कोई ठोस तर्क सामने नहीं रखा गया है।

(27) इससे पहले कि यह पीठ पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा संबोधित तर्कों की शुद्धता का मूल्यांकन करने के लिए आगे बढ़े, यह ध्यान दें महत्वपूर्ण है कि याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता की पहली पांच दलीलें प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों के विभिन्न पहलुओं के उल्लंघन के संबंध में हैं जिन्हें व्यापक अर्थों में समझा जाता है।अदालतों ने यह अभिनिर्धारित करने के लिए एक रणनीतिक बदलाव किया है कि प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों का उल्लंघन होने पर एक आदेश को दरकिनार करना आवश्यक नहीं है।प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों की जांच करने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायाधीशालय ने अध्यक्ष, खनन बोर्ड बनाम रामजी 1 में निम्नलिखित निर्णय दिया:-

> "1. यदि उपचारों के न्यायशास्त्र को सामाजिक प्रभावशीलता के दृष्टिकोण से समझा और लागू किया जाता, तो इस अपील में उठाई गई समस्या उच्च न्यायालय में गलत तरीके से समाप्त नहीं होती।न्यायाधीशाधीशों को यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि प्रत्येक कानून का एक सामाजिक उद्देश्य और इंजीनियरिंग प्रक्रिया होती है, जिसकी सराहना किए बिना कानून के साथ न्याय नहीं किया जा सकता है।यहाँ, हम जिस सामाजिक-कानूनी स्थिति का सामना कर रहे हैं, वह एक कोयला खदान, एक विस्फोटक, एक दुर्घटना है, जो सौभाग्य से घातक नहीं है, जो एक विनियमन के उल्लंघन और परिणामस्वरूप अपचारी गोली चलाने वाले के सरशियोरेराई को रद्द करने के कारण होती है, जिसे अंततः उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया था।
>
> XXX
>
> 13. घातक आपत्ति के रूप में माना जाने वाला अंतिम उल्लंघन यह है कि बोर्ड ने क्षेत्रीय निरीक्षक द्वारा की गई पूछताछ से स्वतंत्र रूप से प्रतिवादी से पूछताछ नहीं की।इसे आवश्यक मानते हुए, यहां प्रतिवादी ने क्षेत्रीय निरीक्षक की रिपोर्ट के खिलाफ अपील के रूप में बोर्ड के अध्यक्ष को अपना स्पष्टीकरण भेजा है। इस प्रकार उन्हें सुना गया है और परिस्थितियों में विनियमन 26 का अनुपालन पूरा हो गया है। प्राकृतिक न्याय कोई बेलगाम घोड़ा नहीं है, कोई छिपी हुई बारूदी सुरंग नहीं है, न ही कोई न्यायिक इलाज है। यदि निर्णय निर्माता द्वारा उस व्यक्ति के प्रति निष्पक्षता

दिखाई जाती है जिसके खिलाफ कार्रवाई की जाती है, तो प्रत्येक स्थिति के तथ्यों और परिस्थितियों द्वारा इस तरह की आवश्यक प्रक्रियात्मक औचित्य के रूप, विशेषताओं और मूल सिद्धांतों की शर्त रखी जाती है, तो प्राकृतिक न्यायाधीश के भंग की शिकायत नहीं की जा सकती है।प्रशासनिक वास्तविकताओं और किसी मामले के अन्य कारकों के संदर्भ के बिना प्राकृतिक न्याय का अप्राकृतिक विस्तार, परेशान करने वाला हो सकता है।हम न तो दंडात्मक हो सकते हैं और न ही कट्टर हो सकते हैं, लेकिन इस अधिकार क्षेत्र में लचीला होने के बावजूद दृढ़ होना चाहिए। किसी भी व्यक्ति को बेल्ट के नीचे नहीं मारा जाएगा-यही मामले की अंतरात्मा है।"

(28) इसके बाद, सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न अन्य निर्णयों में इस पहलू की जांच की।हालांकि, धरम पाल सत्य पाल लिमिटेड बनाम उपायुक्त केंद्रीय उत्पाद शुल्क गुवाहाटी और अन्य 2 में निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गयाः-

20. प्राकृतिक न्याय अंग्रेजी सामान्य कानून की एक अभिव्यक्ति है। प्राकृतिक न्याय कोई एकल सिद्धांत नहीं है-यह विचारों का एक परिवार है। एक अर्थ में न्यायाधीश का प्रशासन स्वयं को प्राकृतिक गुण के रूप में माना जाता है और इसलिए, प्राकृतिक न्याय का एक हिस्सा है। इसे "प्राकृतिक न्याय" वाक्यांश के लिए "प्रकृतिवादी" दृष्टिकोण भी कहा जाता है और यह "नैतिक प्रकृतिवाद" से संबंधित है। नैतिक प्रकृतिवाद सामान्य नैतिकता के सार को पकड़ता है-कि अच्छा और बुरा, सही और गलत, प्राकृतिक दुनिया की वास्तविक विशेषताएं हैं जिन्हें मानव तर्क समझ सकता है। इस अर्थ में, यह न्याय के संबंध में सद्गुण नैतिकता और सद्गुण न्यायाधीशशास्त्र को समझ सकता है क्योंकि ये सभी प्राकृतिक न्याय के गुण हैं।हम यहाँ प्राकृतिक न्याय के इस अर्थ के साथ खुद को संबोधित नहीं कर रहे हैं।

` 21. सामान्य कानून में, प्राकृतिक न्याय की अवधारणा और सिद्धांत, विशेष रूप से जिसे न्यायाधीशिक और अर्ध-न्यायाधीशिक निकायों द्वारा निर्णय लेने में लागू किया जाता है, ने एक अलग अर्थ ग्रहण किया है।यह इस बुनियादी बात को ध्यान में रखते हुए विकसित किया गया है कि जिनका कर्तव्य निर्णय लेना है, उन्हें न्यायिक रूप से कार्य करना चाहिए।उन्हें दोनों को पक्षपात के बिना संदर्भित प्रश्न से निपटना चाहिए और उन्हें प्रत्येक पक्ष को मामले को पर्याप्त रूप से प्रस्तुत करने का अवसर देना चाहिए। यह माना जाता है कि उपरोक्त विशेषताओं का अभ्यास को ध्यान में रखते हुए ही न्याय करने की ओर ले जाएगा। चूँकि इन विशेषताओं को प्राकृतिक या मौलिक माना जाता है, इसलिए इसे "प्राकृतिक न्याय" के रूप में जाना जाता है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत समय के साथ विकसित हुए और जो अभी भी प्रचलन में हैं और मान्य भी हैं। आज हैंः(i) पूर्वाग्रह के खिलाफ नियम अर्थात न्याय में निमो

डिबेट एसे जुडेक्स प्रोप्रिय सुआ कौसा; और (ii) संबंधित दूसरे पक्ष को भी सुनो का अवसर अर्थात ऑडियो अल्टरम पार्टेम। इन्हें प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के रूप में जाना जाता है।इन सिद्धांतों में एक तीसरा सिद्धांत जोड़ा गया है, जो हाल ही में उत्पन्न हुआ है।निर्णय के समर्थन में कारण देना कर्तव्य है, अर्थात् "तर्कपूर्ण आदेश" पारित करना।-

XXX----------XXXX

38. लेकिन बात यहीं खत्म नहीं होती। जबकि ऑडी अल्टरम दूसरे पक्ष को भी सुनो सिद्धांत पर कानून ने ऊपर उल्लिखित तरीके से प्रगति की है, साथ ही अदालतों ने बार-बार यह भी टिप्पणी की है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत बहुत लचीले सिद्धांत हैं। इन्हें किसी भी स्ट्रैटजैकेट सूत्र में लागू नहीं किया जा सकता है। यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि किस प्रकार के कार्य किए जाते हैं और किसी व्यक्ति के किस हद तक प्रभावित होने की संभावना है। इस कारण से, कुछ परिस्थितियों में उपरोक्त सिद्धांतों के कुछ अपवादों को लागू किया गया है।उदाहरण के लिए, अदालतों ने माना है कि किसी व्यक्ति को प्रतिनिधित्व करने की अनुमति देना पर्याप्त होगा और सभी मामलों में मौखिक सुनवाई आवश्यक नहीं हो सकती है, हालांकि कुछ मामलों में, मामले की प्रकृति के आधार पर, न केवल पूर्ण मौखिक सुनवाई बल्कि गवाहों की प्रतिपरीक्षा को भी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के एक आवश्यक सहवर्ती के रूप में माना जाता है। इसी तरह, अनुशासनात्मक कार्रवाई के माध्यम से बड़ी सजा से संबंधित सेवा मामलों में, आवश्यकता बहुत सख्त है और वैधानिक नियमों के तहत भी पूर्ण अवसर की परिकल्पना की गई है। दूसरी ओर, उन मामलों में जहां आरोप स्वीकार किया जाता है, तब भी जब ऐसी कोई औपचारिक जांच नहीं की जाती है, इस तरह के स्वीकार के आधार पर सजा बरकरार रखी जाती है। यही कारण है कि कुछ परिस्थितियों में निर्णय के बाद की सुनवाई की भी अनुमति दी जाती है। इसके अलावा, अदालतों ने माना है कि कुछ परिस्थितियों में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को समय, स्थान, अनुमानित खतरे आदि जैसे विभिन्न कारकों के कारण भी बाहर रखा जा सकता है।

39. हम वर्तमान मामले में इन पहलुओं से चिंतित नहीं हैं क्योंकि यह मुद्दा कार्रवाई करने से पहले नोटिस देने से संबंधित है। इस बात पर जोर देते हुए कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को स्ट्रैटजैकेट सूत्र में लागू नहीं किया जा सकता है, उपरोक्त

उदाहरण दिए गए हैं। हमने प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने के न्यायाधीशिक आधार पर प्रकाश डाला है जो प्रक्रियात्मक निष्पक्षता, सामान्य सामाजिक लक्ष्यों की ओर ले जाने वाले परिणाम की सटीकता आदि के सिद्धांत पर आधारित हैं। फिर भी, ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें किसी कारण से-शायद इसलिए कि व्यक्ति के खिलाफ साक्ष्य को पूरी तरह से सम्मोहक माना जाता है-यह महसूस किया जाता है कि एक निष्पक्ष सुनवाई से कोई फर्क नहीं पड़ेगा-जिसका अर्थ है कि सुनवाई निर्णय निर्माता द्वारा पहुँचाए गए अंतिम निष्कर्ष को नहीं बदलेगी-तब सुनवाई प्रदान करने का कोई कानूनी कर्तव्य उत्पन्न नहीं होता है। इस तरह के दृष्टिकोण का भगवान विल्बरफोर्स ने मल्लोच बनाम एबरडीन कॉर्प में।[(1971) 1 डब्ल्यू. एल. आर. 1578:(1971) 2 सभी ई. आर. 1278 (एच. एल.)] (डब्ल्यूएलआर पी. 1595: ऑल ईआर पी. 1294) समर्थन किया था। , जिन्होंने कहा कि:

"... प्रक्रिया का भंग.... अदालतों में कोई उपाय नहीं दे सकता है, जब तक कि इसके पीछे कुछ सार न हो जो विफलता से खो गया हो। अदालत व्यर्थ में काम नहीं करती है।"

इन टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए, ब्रैंडन एल. जे. ने राय दी सिनामोन्ड बनाम ब्रिटिश हवाई अड्डा प्राधिकरण [(1980) 1 डब्ल्यूएलआर 582 :(1980) 2 सभी ई. आर. 368 (सी. ए.)] कि:(डब्ल्यू. एल. आर. पी. 593: सभी ई. आर. पी. 377)

"... कोई भी इस बात की शिकायत नहीं कर सकता कि उसे अभ्यावेदन देने का अवसर नहीं दिया गया है, अगर इस तरह के अवसर से उसे कुछ भी लाभ नहीं होता।"

ऐसी स्थितियों में, निष्पक्ष प्रक्रियाओं से कोई उद्देश्य पूरा नहीं होता है क्योंकि व्यक्ति के साथ इस तरह के व्यवहार के बिना "सही" परिणाम प्राप्त किया जा सकता है।

40. इस संबंध में, हमें एक अन्य अपवाद पर ध्यान देने की आवश्यकता है जिसे न्यायालयों द्वारा उपरोक्त सिद्धांत के अनुसार बनाया गया है। भले ही अदालत द्वारा यह पाया जाता है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, अदालतों ने माना है कि कार्रवाई को रद्द करने और प्रक्रियात्मक आवश्यकता का पालन करने के बाद नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामले को अधिकारियों को वापस भेजने की आवश्यकता नहीं हो सकती है। जिन मामलों में सुनवाई की अनुमति न दिए जाने से उस व्यक्ति पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है जिसके

खिलाफ कार्रवाई की गई है।इसलिए, प्राकृतिक न्याय के एक पहलू के प्रत्येक उल्लंघन से यह निष्कर्ष नहीं निकल सकता है कि पारित आदेश हमेशा अमान्य होता है। आदेश की वैधता "पूर्वाग्रह" की कसौटी पर तय की जानी चाहिए। अंतिम परीक्षा हमेशा एक ही होती है अर्थात पूर्वाग्रह की परीक्षा या निष्पक्ष सुनवाई की परीक्षा।

(29) हाल ही में, उपरोक्त सिद्धांतों को दोहराया गया है और इसके बजाय माननीय उच्चतम न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सुधीर कुमार सिंह और अन्य 3 में विस्तारित अर्थ दिया गया है। पैरा 39 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निष्कर्ष का सारांश दिया, जिसे निम्नानुसार निकाला गया हैः-

39 उपरोक्त निर्णयों के विश्लेषण से इस प्रकार पता चलता हैः(1) प्राकृतिक न्याय न्यायपालिका के हाथों में एक लचीला उपकरण है जो अन्याय को दूर करने के लिए उपयुक्त मामलों में पहुँचता है।ऑडी अल्टरम पार्टेम नियम दूसरे पक्ष को भी सुनो अपने आप में, बिना अधिक के, इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता है कि पूर्वाग्रह इसके कारण होता है।

(2) जहाँ प्रक्रियात्मक और/या कानून के मूल प्रावधान प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को मूर्त रूप देते हैं, वहाँ उनके उल्लंघन से पारित आदेशों की अयोग्यता नहीं होती है। यहाँ फिर से, वादकारी के लिए पूर्वाग्रह पैदा किया जाना चाहिए, कानून के एक अनिवार्य प्रावधान के मामले को छोड़कर, जिसकी कल्पना न केवल व्यक्तिगत हित में, बल्कि सार्वजनिक हित में भी की गई है।

(3) प्राकृतिक न्याय के भंग की शिकायत करने वाले व्यक्ति के लिए कोई पूर्वाग्रह पैदा नहीं किया जाता है जहां ऐसा व्यक्ति उसके या उसके खिलाफ मामले पर विवाद नहीं करता है। यह अवरोध, स्वीकृति, छूट और गैर-चुनौती या गैर-इनकार या तथ्यों को स्वीकार करने के कारण हो सकता है, उन मामलों में जिनमें न्यायाधीशालय तथ्यों पर पाता है कि इसलिए प्राकृतिक न्याय के भंग की शिकायत करने वाले व्यक्ति के लिए कोई वास्तविक पूर्वाग्रह नहीं कहा जा सकता है।

(4) ऐसे मामलों में जहां तथ्यों को स्वीकार या निर्विवाद कहा जा सकता है, और केवल एक ही निष्कर्ष संभव है, न्यायालय दरकिनार करने या रिमांड का निरर्थक आदेश पारित नहीं करता है, जब वास्तव में, कोई पूर्वाग्रह नहीं होता है।यह निष्कर्ष न्यायालय द्वारा किसी मामले के तथ्यों के मूल्यांकन पर निकाला जाना चाहिए, और उस प्राधिकारी द्वारा नहीं जो किसी व्यक्ति को प्राकृतिक न्याय से वंचित करता है।

(5) "पूर्वाग्रह" अपवाद केवल एक आशंका या एक वादकारी के उचित संदेह से भी अधिक होना चाहिए। यह तथ्य के रूप में मौजूद होना चाहिए, या प्राकृतिक न्याय का पालन न करने से पूर्वाग्रह की संभावना के एक निश्चित अनुमान पर आधारित होना चाहिए। पूर्वगामी पैराग्राफ में पहले से की गई चर्चा को ध्यान में रखते हुए,तर्क सं.1-5 अस्वीकार कर दिया गया। खं ड 6 के तहत देखे गए तर्कों का उत्तर उपरोक्त पैरा 9.3 में निहित है।

(30) जहां तक विवाद के तहत तर्क का संबंध है, सं.7, यह ध्यान दिया जा सकता है कि यहाँ प्रश्न हैः-

(i)क्या याचिकाकर्ताओं ने एच. पी. यू. अधिनियम, 2006 या एच. आर. आर. एस. अधिनियम, 2012 के प्रावधानों का उल्लंघन किया है।

(ii) प्रायोजक निकाय का नाम बदलने की अनुमति देते समय प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित था या नहीं।

(31) याचिकाकर्ता नं.3- विश्वविद्यालय एचपीयू अधिनियम, 2006 का एक सृजन है। प्रायोजक निकाय को प्रतिस्थापित करने के लिए अधिनियम में प्रावधान की अनुपस्थिति में में, कोई अनुमति नहीं दी जा सकती थी। इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं के रुख के अनुसार, वे राज्य की सीमा से परे अपनी गतिविधियों का विस्तार करने की योजना बना रहे हैं, जिसकी अनुमति देने पर, एचपीयू अधिनियम 2006 की खंड 10 का उल्लंघन होगा। इस प्रकार, विवाद संख्या 7 के पहले भाग में कोई सार नहीं है। जहाँ तक विवाद के दूसरे भाग का संबंध है, यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि याचिकाकर्ता अधिनियम के प्रावधान का उल्लंघन करने का इरादा रखता है। यदि याचिकाकर्ता अपनी गतिविधियों का विस्तार करना चाहते हैं, जैसा कि अनुमान लगाया जा रहा है, तो वे राष्ट्रीय स्तर के विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग/या किसी अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों के अनुसार विश्वविद्यालय की मान्यता/पंजीकरण के लिए आवेदन करने के लिए स्वतंत्र हैं।

(32) याचिकाकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता का अंतिम तर्क एक सेवारत आई. ए. एस. अधिकारी के प्रभाव के संबंध में है, जो पहले सोसायटी के सदस्य थे। उसकी पत्नी ने भी शिकायत दर्ज कराई है। यहां यह ध्यान दिया जा सकता है कि दस्तावेजों के अवलोकन से यह पीठ यह नहीं पाती है कि विचाराधीन आदेश अधिकारी के प्रभाव में पारित किया गया है। राज्य के मुख्यमंत्री ने अपने उड़न दस्ते के एक अधिकारी द्वारा से जांच कराने के बाद एक सचेत निर्णय लिया है। हरियाणा के महाधिवक्ता ने उच्चतम स्तर पर लिए गए निर्णय की एक फोटोकॉपी प्रस्तुत की है। यह

अभिलेख पर स्थापित नहीं है कि आई. ए. एस. अधिकारी उच्चतम स्तर पर निर्णय को प्रभावित करने की स्थिति में है। आईएएस अधिकारी पहले हरियाणा सिविल सेवा के सदस्य थे और हाल ही में उन्हें आईएएस में शामिल किया गया है।

(33) जहाँ तक विद्वान अधिवक्ता के तर्क का संबंध है कि डी.एस.पी द्वारा की गई जांच रिपोर्ट की प्रति की आपूर्ति नहीं की गई है, यह देखा जा सकता है कि उप्रथमदृष्टयोक्त जांच श्रीमती प्रोमिला सिंह द्वारा लगाए गए आरोपों में सार का पता लगाने के लिए एक अनौपचारिक जांच थी। किसी भी मामले में, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता जांच रिपोर्ट की प्रति की आपूर्ति न करने के कारण हुए किसी भी पूर्वाग्रह के संबंध में अदालत को समझाने में विफल रहे। इसके अलावा, प्राथमिकी दर्ज करने से पहले, आरोपी को की गई अनौपचारिक जांच की प्रति प्रदान करने की आवश्यकता नहीं है। किसी भी मामले में, अब हरियाणा राज्य द्वारा दायर लिखित प्रस्तुतियों के साथ याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता को जांच रिपोर्ट की एक प्रति अग्रिम रूप से प्रदान की गई है और उसके बाद, स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया गया है, हालांकि, रिट याचिका और दायर लिखित प्रस्तुतियों में जो अनुरोध किया गया है, उसके अलावा कोई और बिंदु सामने नहीं रखा गया है। अतः तर्क में कोई सार नहीं है।

(34) उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस पीठ को रिट जारी करना उचित नहीं लगता है, जैसा कि अनुरोध किया गया था। इसलिए याचिका खारिज की जाती है।

ऋतंब्रा ऋषि

1(1977) 2 एस. सी. सी. 256

2 (2015) 8 एस. सी. सी. 519

3 (2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन (एस. सी.)847

प्रदीप कुमार, अनुवादक

अस्वीकरण:- स्थानीय भाषा में अनुवादित निणर्य वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्येश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्धेश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।